इकाई 1 वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक

इकाई की संरचना

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक
1.3 वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्यों का परिचय
1.4 सारांश
1.5 शब्दावली
1.6 अभ्यास प्रश्न की उत्तरमाला
1.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.0 उद्देश्य

वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक नामक इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ पायेंगे किः

- वास्तुशास्त्र का अर्थ क्या है?
- वास्तुशास्त्र की उत्पत्ति के मूल में कौन-कौन से प्रवर्तक आचार्य रहे?
- वास्तुशास्त्र की विधा मे विद्यमान बीज तथा संपूर्ण वास्तुशास्त्र के प्रवर्तकों का स्पष्ट स्वरूप?
- वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्य कौन-कौन हैं?
- वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्यो के व्यक्तित्व व कृतित्व का परिचय?
- वास्तुशास्त्र की आचार्य परम्परा को जानकर वास्तुशास्त्र के अध्ययन में रुचि जागृत होगी।

1.1 प्रस्तावना

'वास्तु' शब्द की उत्पत्ति संस्कृत की 'वस्' धातु से हुई है, जिसका अर्थ है 'वसना' अर्थात् 'निवास करना'। "वसन्ति प्राणिनो यत्र" अर्थात् प्राणियों के वास-स्थान को 'वास्तु' कहा जाता है। इस दृष्टि से जो प्राणी जहाँ रहता है उसके लिए वही वास्तु है। जलचर जल में रहते हैं, उनके लिए जल ही वास्तु है। पक्षी अपने घोसले में रहते हैं, अत: उनके लिए घोसला ही उनका वास्तु है परन्तु अमरकोष में गृह के लिए नियत भूमि को 'वास्तु' कहा गया है।' शब्दार्थभानु', पद्मचन्द्रकोश, शब्दस्तोममहानिधि' और शब्दार्थ चिन्तामणि आदि कोश-ग्रन्थों में भी वास्तु शब्द का अर्थ 'वास-योग्य भूमि' अथवा 'गृह-करण-योग्य भूमि' गृहीत है। ऋग्वेद में वास्तु शब्द का प्रयोग 'भवन' अथवा गृह' के लिए हुआ है। इस प्रकार सामान्यतया निवास-योग्य भूमि की संज्ञा वास्तु है और वास्तु अर्थात् भवन से सम्बन्धित शास्त्र को 'वास्तुशास्त्र' कहा जाता है। भारतीय परम्परा में वास्तुशास्त्र अर्थात्

निर्माण अभियान्त्रिकी को ऋषियों अथवा मनीषियों के अद्वितीय ज्ञान-कोष से उद्धृत माना गया है।

वास्तु का अभिप्राय व्यापक है। आचार्य विश्वकर्मा ने जहाँ पर देव, मनुष्य तथा गज, गो और अश्वादि पशु निवास करते हैं, उसे 'वास्तु' कहा है।' इसी प्रकार मानसार और मयमत' आदि ग्रन्थों में भी देवों और मनुष्यों के निवासस्थल को 'वास्तु' कहा गया है। इसके अतिरिक्त भवन-निर्माण में प्रयोग होने वाली वस्तुओं तथा मानव जिन वस्तुओं का प्रयोग अपनी सुख-सुविधा के लिए करता है, उन्हें भी वास्तु की संज्ञा दी गई है। विश्वकर्मवास्तुशास्त्र के अनुसार इष्टिका, शिला, वृक्ष तथा कीलादि सभी वस्तुओं की वास्तु संज्ञा है। इसी प्रकार मानसार' और मयमत में वास्तुशास्त्र विषयक भूमि प्रासाद, यान तथा पर्यङ्क या शयन का श्रृङ्खलाबद्ध सङ्कीर्तन हुआ है। इन ग्रन्थों में उपर्युक्त वस्तुओं को वास्तु की संज्ञा देते हुए 'भूमि' को ही मुख्य वास्तु बताया गया है, क्योंकि इन वस्तुओं का निर्माण मूलत: जिन वस्तुओं से होता है उनका उत्पत्ति-स्थान 'भूमि' ही है। दूसरे शब्दों में इन सभी वस्तुओं का आधार 'धरा' है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर वास्तु शब्द की उत्पत्ति 'वस्तु' से भी स्वीकार्य है। वास्तुशास्त्रीय ग्रन्थों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि वास्तु शब्द व्यापक अर्थ को समाहित किये हुए है। वास्तु मात्र गृह के अर्थ में ही नहीं, अपितु गृह से सम्बन्ध रखने वाले धार्मिक, व्यवसायिक तथा समस्त भवनों के अर्थ में प्रयुक्त होता है। भारतीय परम्परा में गृहनिर्माण की यह परम्परा अत्यन्त सुनियोजित विधि से पाण्डुलिपियों में संरक्षित है, जिसके अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि यह समस्त ज्ञानधारा एकाएक नहीं अपितु कई पीढ़ियों के अनुसन्धान व दैवीय शक्तियों से सम्पन्न आचार्यों के अथाह परिश्रम के फलस्वरूप वर्तमान काल में हमें प्राप्त हुई है। वास्तुशास्त्र के अध्ययन से भारतीय संस्कृति की वैज्ञानिक और समृद्ध परम्परा का ज्ञान होता है। आदिकाल से ही विश्व की सभी संस्कृतियों में स्व-स्व मान्यताओं के आधार पर अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु गृहनिर्माणादि की परम्परा थी। जिसमें देश-काल तथा परिस्थिति के आधार पर कालक्रमानुसार परिवर्तन भी होता रहा है। परन्तु इस परिवर्तन में वास्तुशास्त्र के मूलभूत सिद्धान्त का पूर्णतः संरक्षण किया गया, जिससे आज भी हमें वास्तुशास्त्र का वही शुद्ध स्वरूप प्राप्त होता है । मनु महाराज के वचनानुसार – **"स सर्वोऽभिहितो वेदे सर्वज्ञानमयो हि सः"** भारतीय ज्ञान परम्परा में प्रत्येक भारतीय शास्त्र के उद्भव के मूल में ईश्वरीय ज्ञान वेद तत्त्व को स्वीकार किया गया है। वास्तुशास्त्र भी इसका अपवाद नहीं है।

1.2 वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक

वास्तुशास्त्र का मूल उद्गम ब्रह्मा जी से माना जाता है। ब्रह्मा जी को वास्तुशास्त्र के प्रवर्त्तक के रूप में माना जाता है। क्योंकि चतुर्विध अथर्ववेद का उपवेद स्थापत्य के साथ-साथ अन्य उपवेदों एवं अष्टविध चिकित्सा (आयुर्वेद) सप्तविध धनुर्वेद तथा ज्योतिष शास्त्र का मूल ब्रह्मा जी को ही बताया गया है –

चतुः प्रकारं स्थापत्यमष्टधा च चिकित्सिकम्।
धनुर्वेदश्च्च सप्ताङ्गो ज्योतिषं कमलालयात्॥

पुराणों के अनुसार पृथु ने जब पृथ्वी को समतल किया और ब्रह्मा जी से पृथ्वी पर नगर- ग्राम आदि की रचना सम्बन्ध में निवेदन किया। यथोक्तम्-

ग्रामान् पुरः पत्तनानि दुर्गाणि विविधानि च।
घोषान् व्रजान् सशिविरानाकारान् खेटखर्वटान्॥

प्राक् पृथोरिह नैतेषां पुरग्रामादिकल्पना।
यथा सुखं वसन्ति स्म तत्र तत्राकुतो भयाः ॥

पृथु के इस निवेदन को सुनकर ब्रह्मा जी ने अपने चारों मुखों से विश्वकर्मा आदि की उत्पत्ति की, ब्रह्मा के पूर्व मुख को विश्वभू, दक्षिण मुख को विश्वविद्, पश्चिम मुख को विश्वस्रष्टा और उत्तर मुख को विश्वस्थ कहा जाता है। ब्रह्मा के विश्वभू नामक मुख से विश्वकर्मा की, विश्वविद् नामक दक्षिण मुख से मय की, विश्वस्रष्टा नामक पश्चिम मुख से मनु की तथा उत्तर दिशा में विश्वस्थ नामक मुख से त्वष्टा की उत्पत्ति हुई। इन चारों का सम्बन्ध वास्तुशास्त्र से माना जाता है। इनमें से भी विश्वकर्मा, मय और त्वष्टा का तो साक्षात् सम्बन्ध वास्तुशास्त्र से है। विश्वकर्मा और मय की परम्परा तो वास्तुशास्त्र में अत्यधिक पल्लवित और विकसित हुई। कालान्तर में वास्तुशास्त्र से सम्बन्धित अनेकों ग्रन्थों की रचना की गई, जिनमें से कुछ आचार्यों ने विश्वकर्मा तथा कुछ आचार्यों ने मय की परम्परा का अनुसरण किया। इस शास्त्र के अध्येताओं और आचार्यों की एक अपनी विशिष्ट परम्परा थी। इसका शास्त्रीय और प्रायोगिक कलेवर द्विजों के ही परिश्रम का परिणाम था। वास्तुशास्त्र मर्मज्ञ सूत्रधार के गुणों की चर्चा करते हुए उसके द्विजत्व की भी चर्चा के गई है। कहा भी है -

"सुशीलश्चतुरो दक्षः शास्त्रज्ञो लोभवर्जितः ।
क्षमायुक्तो द्विजश्चैव सूत्रधार स उच्यते ॥"

शनैः शनै: यह विद्या द्विजेतरों के हस्तगत हो गई और इस विद्या के अध्येताओं के ज्ञान, प्रयोग और चारित्रिक ह्रास के कारण यह विद्या अपना गरिमामय स्थान खो बैठी। विश्वकर्मा के शाप से दग्ध इस विद्या के अध्येता-शिल्पि विश्वकर्मा के शापित पुत्र कहलाए, जो कि मालाकार, कर्मकार, शंखकार, कुविन्द, कुम्भकार, कांस्यकार, सूत्रधार, चित्रकार, स्वर्णकार थे। ये विश्वकर्मा के शूद्रपुत्रों के रूप में विख्यात हुए।

यथोक्तम् "ततोनवैतेशिल्पकारिणः।
'बभूवुः पुत्राश्च मालाकारकर्मकारशङ्खकारकुविन्दकाः ॥

कुम्भकारः कांस्यकार: स्वर्णकारस्तथैव च।
पतितास्ते ब्रह्मशापाद अयाज्या वर्णसङ्करा ॥"

इस प्रकार विश्वकर्मा के ये सभी पुत्र विविध कलाओं में पारंगत थे। कालान्तर में अध्ययन से विमुखता के कारण विश्वकर्मा के इन पुत्रों का प्रायोगिक दृष्टि से तो विकास हुआ परन्तु सैद्धान्तिक दृष्टि से ये शास्त्र के मर्म से अपरिचित होते गये। आज भी विविध कलाओं में निष्णात ये शिल्पी शास्त्रज्ञान से रहित दिखाई देते हैं। वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्यों का उल्लेख वास्तुशास्त्र के अनेक ग्रन्थों और पुराणों में प्राप्त होता है। मत्स्यपुराण में भृगु, अत्रि, वशिष्ठ, विश्वकर्मा, मय, नारद, नग्नजित, विशालाक्ष, पुरन्दर, ब्रह्मा, कुमार, नन्दीश, शौनक, गर्ग, वासुदेव, अनिरुद्ध, शुक्र तथा बृहस्पति इन अठारह आचार्यों का वर्णन प्रवर्तक आचार्यों के रूप

मे किया गया है। यथोक्तम् -

"भृगुरत्रिवशिष्ठश्च विश्वकर्मामयस्तथा।
नारदो नग्नजिच्चैव विशालाक्ष: पुरन्दरः ॥

ब्रह्मा कुमारो नन्दीश: शौनको गर्ग एव च।
वासुदेवोऽनिरुद्धश्च तथा शुक्रो बृहस्पतिः॥

अष्टादशैते विख्याता वास्तुशास्त्रोपदेशकाः।
संक्षेपेणोपदिष्टं यन्मनवे मत्स्यरूपिणः॥"

अग्निपुराण में वास्तुशास्त्र के उपदेशक आचार्यों की सङ्ख्या पच्चीस कही गई है। अग्निपुराण की इस सूची में हयशीर्ष (हवशीर्ष तन्त्र), गालव, त्रिलोकमोहन (त्रैलोक्यमोहन तन्त्र), नारद (नरदीय तन्त्र), विभव (विभव तन्त्र), सम्प्रश्न, पुष्कर (पौष्कर तन्त्र), शाण्डिल्य (शाण्डिल्य तन्त्र) प्रह्लाद। प्रह्लाद तन्त्र), विश्वक (वैश्वक तन्त्र), गर्ग (गार्ग्या तन्त्र), सत्य (सात्य तन्त्र), शुनक (शौनक तन्त्र) वशिष्ठ (वशिष्ठ तन्त्र), ज्ञानसार, स्वयम्भू (स्वायम्भुव तन्त्र), कपिल (कापिल तन्त्र), तार्क्ष्य, नारायण (नारायणिका तन्त्र), अत्रि (आत्रेय तन्त्र), नरसिंह (नारसिंह तन्त्र), आनन्द, अरुण (आरुण तन्त्र), वास्तुशास्त्र का परिचय व स्वरूप बौधायान, ऋषि (आर्ष) आदि का उल्लेख प्राप्त होता है। तद्यथा -

"व्यस्तानि मुनिभिर्लोके पञ्चविंशति सङ्ख्यया।
हयशीर्षं तन्त्रमाद्य तन्त्र त्रैलोक्यमोहनम् ॥

वैभवं पौष्करं तन्त्रं प्रह्लादं गार्ग्यगालवम्।
नारदीयं च सम्प्रश्नं शाण्डिल्यं वैश्वकं तथा ॥

सत्योक्तं शौनकं तन्त्रं वशिष्ठं ज्ञानसागरम्।
स्वायम्भुवं कापिलं च ताक्ष्य नारायणीयकम् ॥

आत्रेयं नारसिंहाख्यमानन्दाख्यं तथारूणकम्।
बौधायनं तथार्षं तु विश्वोक्तं तस्य सारतः ॥"

वास्तुशास्त्र के एक अन्य मुख्य ग्रन्थ मानसार में वास्तुशास्त्र के उपदेशक आचार्यों की सङ्ख्या बत्तीस कही गई है। मानसार में विश्वकर्मा, विश्वेश, विश्वेसार, प्रबोधक, वृत्र, मय, त्वष्टा, मनु, नल, मानवित, मानकल्प, मानसार, प्रष्टा, मानबोध, विश्वबोध, मय, आदिसार, विशाल, विश्वकाश्यप, वासुबोध, महातन्त्र, वास्तुविद्यापति, पाराशरीयक, कालयूपचैत्य, चित्रक, आवर्य, साधकसार, भानु, इन्द्र, लोकज्ञ और सूर्य इन आचार्यों का उल्लेख किया गया है। यथा-

"विश्वकर्मा च विश्वेश: विश्वसार: प्रबोधक:।
वृत्तश्चैव मयश्चैव त्वष्टा चैव मनुर्नलः ॥

मानविन्मानकल्पश्च मानसारी बहुश्रुतः।
प्रष्टा च मानबोधश्च विश्वबोधो मयस्तथा ॥

आदिसारो विशालाश्च विश्वकाश्यप एव च।
वास्तुबोधो महातन्त्रो वास्तुविद्यापतिस्तथा॥

पाराशरीयकश्चैव कालयूपो महाऋषिः।
चैत्याख्य: चित्रक: आवर्यः साधकसारसहितः॥

भानुश्चेन्द्रश्च लोकज्ञ: सौराख्य: शिल्पिवित्तमः।
ते एव ऋषय: प्रोक्ता द्वाविंशति सङ्ख्यया॥ "

आचार्य वराहमिहिर ने बृहत्संहिता में गर्ग, मनु, वशिष्ठ, पाराशर, विश्वकर्मा, नग्नजित, मय आदि सात आचार्यो की चर्चा वास्तुशास्त्रज्ञ के रूप में की है। सनत्कुमार कृत वास्तुशास्त्र में ग्यारह वास्तुविदों का उल्लेख मिलता है। जिनके नाम क्रमशः ब्रह्मा, गौतम, भग, इन्द्र, गार्ग्य, अंगिरा, यम, मनु, विश्वकर्मा, भार्गव, तथा व्यास है। वास्तुकौस्तुभ ग्रन्थ में शौनक, राम, रावण, परशुराम, हरि, गालव, विश्वकर्मप्रकाश, मयशिल्पगौतम, शौभित, वैद्याचार्य, कार्तिकेय और च्यवन आदि आचार्यों का उल्लेख किया गया है। विश्वकर्माप्रकाश में पन्द्रह वास्तुविदों का उल्लेख मिलता है। जिनके नाम क्रमशः अगस्त्य, नन्दी, लोकदर्शक, कश्यप, पालकप्य, पुण्डरीक, नारद, कात्यायन, दीर्घदर्शी, बृहस्पति, मरीचि, पुनर्वस, तिम्यलोक, चित्रतोयक तथा योगसार है। इसी प्रकार से रामायणकाल में वास्तुविद् महाभारत काल में रूप में आचार्य नल और नील का वर्णन प्राप्त होता है। इन्होंने ही समुद्र पर सेतु का निर्माण किया था। लाक्षागृह का निर्माण करने वाले आचार्य पुरोचन प्रमुख वास्तुविद् थे।

1.3 वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्यों का परिचय

उपर्युक्त विवेचनो से स्पष्ट है कि वास्तुशास्त्रके प्रवर्तक आचार्यों की संख्या को लेकर विविध मत प्राप्त होते हैं, परन्तु इन सभी मतों में मत्स्यपुराण में प्रदत्त वास्तुशास्त्र के आचार्यों की संख्या ही सर्वसम्मत मानी गयी है। इन अठारह आचार्यों में से मनु (वैवस्वत) को प्रलयकाल में संक्षेप में मत्स्यरूपधारी भगवान् ने वास्तुशास्त्र का उपदेश दिया था। यहाँ इन वास्तुशास्त्रियों का ऐतिहासिक परिचय अति आवश्यक होने से द्रष्टव्य है, प्रवर्तक आचार्यों का परिचय निम्नानुसार है –

1. महर्षि भृगु

वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्यो में आपका नाम सर्वोपरि है। आपके विषय में अनेक पौराणिक कथाएं प्राप्त होती हैं, जिनमें महर्षि भृगु को ब्रह्माजी का पुत्र माना गया है। एक कथा के अनुसार इनके पिता का नाम भृगु वारुणी था। इनका विवाह दैत्य कुल में हुआ। इनकी प्रथम पत्नी दिव्या (दैत्य हिरण्यकाश्यप की पुत्री) और द्वितीय पत्नी पौलामी (दानवाधिपति पुलोम ऋषि की पुत्री) थी। प्रथम पत्नी दिव्या से दो पुत्र काव्य-शुक्र, त्वष्टा विश्वकर्मा के नाम से विख्यात हुए। ये दोनों ही प्रकाण्ड विद्वान थे। इनमें से काव्य-शुक्र ज्योतिष, खगोल शास्त्र तथा याज्ञिक-कर्मकाण्ड आदि विषयों का प्रकाण्ड विद्वान था। मातृकुल में इन्हें आचार्य की उपाधि प्राप्त हुई, जो बाद में शुक्राचार्य के नाम से प्रसिद्ध हुए। द्वितीय पुत्र त्वष्टा विश्वकर्मा वास्तु एवं शिल्पशास्त्र में निपुण था तथा यह भी अपनी माता के कुल में ही मय नाम से प्रसिद्ध हुए। द्वितीयपत्नी से भी दो पुत्र प्राप्त हुए। जिनका नाम

च्यवन और ऋचीक था।

इसी विषय में एक और आख्यान प्राप्त होता है। देवीभागवत विष्णुपुराण, अग्निपुराण, श्रीमद्भागवत में प्राप्त वर्णन के अनुसार भृगु ऋषि प्रचेता ब्रह्मा के पुत्र थे और इनका विवाह प्रजापति की पुत्री ख्याति से हुआ। जिनसे उन्हें कालांतर में काव्य-शुक्र, त्वष्टा तथा एक पुत्रीश्री (लक्ष्मी) प्राप्त हुई। तदनंतर श्री लक्ष्मी का विवाह भगवान विष्णु के साथ हुआ। इस प्रकार से महर्षि भृगु के विषय में वर्णन प्राप्त होता है। वर्तमान काल में ज्योतिषशास्त्र से सम्बन्धित मनीषियों को इनके वंशानुक्रम का ज्ञान हो या ना हो किन्तु इनके द्वारा रचित भृगुसंहिता के विषय में ज्योतिषशास्त्र का प्रत्येक अध्येता परिचित है। महर्षि भृगु का ब्रह्मा के पुत्र होने के कारण ज्योतिष-वास्तु के ज्ञान में पारंगत होने पर तो किसी प्रकार का संशय नहीं किया जा सकता। इनके द्वारा रचित भृगु संहिता को ज्योतिष का मूल ग्रन्थ माना जाता है और ज्योतिषशास्त्र के अङ्गभूत होने के कारण आचार्य भृगु वास्तुशास्त्र के भी ज्ञाता थे। मत्स्यपुराण में इनकी गणना वास्तुशास्त्र प्रवर्तकाचार्यों में भी सर्वप्रथम की गई है।

2. आचार्य अत्रि

अत्रि ऋषि का वर्णन अनेक शास्त्रीय ग्रंथों में कई स्थानों पर प्राप्त होता है। इन्हें भगवान ब्रह्मा का मानस पुत्र माना जाता है। इनकी धर्मपत्नी सती अनसूया हैं। इनका पूरा नाम अत्रिवारुणि था, ये वरुणदेव के तृतीय पुत्र थे। इन्होंने ज्योतिषशास्त्र का भी प्रवर्तन किया था। पुराणों में आचार्य अत्रि को महर्षि की पदवी प्राप्त है और इनकी गणना सप्तऋषियों में होती है। माता अनुसूया से इन्हें तीन पुत्र हुए जो क्रमशः ब्रह्मा-विष्णु-महेश के अंशावतार ही माने जाते हैं। ब्रह्मा ने चंद्र के रूप में जन्म लिया, विष्णु दत्तात्रेय के रूप में अवतरित हुए और भगवान शिव ने दुर्वासा के रूप में जन्म लिया था। अत्रि ऋषि को ऋग्वेद में द्रष्टा ऋषि के रूप में भी स्वीकार किया जाता है तथा ऋग्वेद के पंचम मण्डल को इन्ही के नाम से (अत्रि मण्डल) कहा जाता है। महर्षि अत्रि के अनेक पुत्रवत् शिष्यों का वर्णन प्राप्त होता है जिन्होंने वैदिक ग्रंथों के संकलन में सहयोग प्रदान किया। न केवल ऋग्वेद अपितु आदिकाव्य रामायण तथा महाभारत में भी अत्रि ऋषि के विषय में पर्याप्त सामग्री प्राप्त होती है। रामायण में भगवान राम, लक्ष्मण और सीता के साथ महर्षि अत्रि के आश्रम में जाने और उनके साथ पास बैठ कर धर्म सम्बन्धी विविध चर्चाओं का वर्णन प्राप्त होता है। इनके द्वारा वास्तुशास्त्र से सम्बन्धित किस ग्रन्थ की रचना की गई, यह तो उपलब्ध नहीं होता परन्तु वास्तुशास्त्र के आद्याचार्यों में इनका स्पष्ट उल्लेख इस बात को पुष्ट करता है कि महर्षि अत्रि वास्तुशास्त्र के एक प्रमाणिक विद्वान थे। इनके द्वारा रचित वास्तुशास्त्र से सम्बन्धित ग्रन्थ संस्कृतवाङ्मय के अन्य ग्रन्थों की ही तरह लुप्त हो चुके हैं।

3. आचार्य वशिष्ठ

ये पराशर के पिता शक्तिवसिष्ठ थे। इन शक्तिवसिष्ठ के सम्बन्ध सुदास ऐक्ष्वाक से मधुर थे, परन्तु उनके पुत्र कल्माषपाद से बिगड़ गये थे। ये बाईसवें व्यास थे। जब इनका संघर्ष कल्माषपाद से हुआ तो उसने इन्हें जला दिया था। "ऋतेज्ञानान्नमुक्तिः" ज्ञान के साक्षात्कार के बिना मोक्ष की प्राप्ति असंभव है। भारतवर्ष में आदिकाल से ही इस ज्ञान परंपरा का अनुसरण ऋषियों, महर्षियों, तपस्वियों, आचार्यों के द्वारा किया गया है। मत्स्य पुराण में वर्णित वास्तुशास्त्र के 18 आचार्यों में तीसरे आचार्य के रूप में आचार्य वशिष्ठ

का उल्लेख प्राप्त होता है। आचार्य वशिष्ठ की उत्पत्ति के विषय में दो मत प्राप्त होते हैं। एक मत के अनुसार वशिष्ठ को ब्रह्मा का मानस पुत्र माना जाता है और द्वितीय मत के अनुसार इनकी उत्पत्ति कुम्भ से मानी जाती है। महर्षि वशिष्ठ की गणना भी सप्तऋषियों में की जाती है। महर्षि वशिष्ठ ने जिन ग्रन्थों कीरचना की, उनमें से एक प्रमुख ग्रन्थ वशिष्ठ संहिता है। यह ग्रन्थ 45अध्यायों में विभक्त किया गया है। जैसे -

पञ्चोत्तरचत्वारिंशद्विपुलाध्यायैर्विराजते स्कन्धः ।
अज्ञाज्ञानोपशमनमितरेषां बुद्धिवर्धनं नित्यम् ।

वशिष्ठ संहिता में 2743 श्लोक हैं। यह सम्पूर्ण ग्रन्थ ज्योतिष के विषय पर आधारित है एवं इसमें वास्तुशास्त्र के विषय को भी प्रतिपादित किया गया है। इस संहिता में एक अध्याय का नाम वास्त्वध्याय है जिसमें वास्तु से सम्बन्धित विषय का वर्णन पूर्ण रूप से प्राप्त होता है। इस अध्याय में सम्बन्धित 222 श्लोक प्राप्त होते हैं जिनमें वास्तु के प्रत्येक मुख्य विषय को वास्तुशास्त्र से प्रतिपादित किया गया है। तद्यथा –

वास्तुज्ञानं प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ब्रह्मणा पुरा।
ग्रामसप्तपुरादीनां निर्माण सूक्ष्मतोऽधुना॥

इस प्रकार वास्तु के विषय को प्रतिपादित करते हुए भूमिचयन, दिशाज्ञान, वास्तुपदमण्डल, गृहारम्भमुहूर्त, आय-पिण्ड साधन इत्यादि विषयों का प्रतिपादन किया गया है। अन्त में वास्तुशान्ति और पूजन की विधि का भी विस्तारपूर्वक वर्णन प्राप्त होता है। आचार्यवशिष्ट के मतानुसार स्वस्तिवाचन और वास्तुशान्ति के पश्चात ही नवनिर्मित गृह में प्रवेश करना चाहिए। वास्तुपूजन के बिना गृहप्रवेश करने से रोगों तथा क्लेशों का सामना करना पड़ता है। यथोक्तम् –

वास्तुपूजामकृत्वा यः प्रविशेन्नवमन्दिरे।
रोगान्नानाविधान्क्लेशानश्नुते सर्वसंकटान्॥

इस प्रकार इन्हें ज्योतिष शास्त्र एवं वास्तुशास्त्र के प्रवर्तकों में स्थान प्राप्त है।

4. आचार्य विश्वकर्मा

भारतीय संस्कृति में विश्वकर्मा को निर्माण का देवता माना गया है। वेदों में स्पष्ट रूप से विश्वकर्मा का वर्णन प्राप्त होता है। ऋग्वेद में विश्वकर्मा से सम्बन्धित सूक्त प्राप्त होता है, जिसमें 11 ऋचाएं हैं, जिसमें विश्वकर्मा को विश्वकर्माभावनऋषि: की संज्ञा दी गई है। न केवल ऋग्वेद अपितु यजुर्वेद में भी 16 मंत्रों में विश्वकर्मा का वर्णन किया गया है –

"ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात......" इस प्रकार वेदों में भी विश्वकर्मा की सर्वव्यापकता, सर्वज्ञता, सर्वसम्पन्नता को दर्शाया गया है। मानाजाता है कि एक ही समान गुण-धर्मों से युक्त अनेक ऋषि हुए और कालांतर में गुणों की दृष्टि से समानता होने के कारण उन्हें विश्वकर्मा की उपाधि प्रदान की गई। प्राचीन ग्रन्थों, उपनिषदों, पुराणों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि आदिकाल से ही विश्वकर्मा शिल्पी अपने निर्माण सम्बन्धी अतिवशिष्ट ज्ञान के कारण मानवों में ही नहीं अपितु देवताओं में भी पूज्य हैं। वैदिक ऋचाओं में, पुराणों में, काव्यों में नगर, पुर, प्रासाद, ग्राम, खेट, शस्त्र,

विमान इत्यादि सभी प्रकार के निर्माण भगवान विश्वकर्मा के द्वारा ही किये जाते हैं। विश्वकर्मापुराण में तो यहाँ तक वर्णन प्राप्त होता है कि स्वयं ब्रह्मा-विष्णु-महेश को बनाने वाले भी भगवान विश्वकर्मा ही हैं। इस प्रकार से विश्वकर्मा को निर्माण के देवता के रूप में यदि स्वीकार किया जाए तो इसमें अतिशयोक्ति नहीं है। विश्वकर्मा द्वारा रचित विश्वकर्मावास्तुशास्त्रम् एक प्रमुख ग्रन्थ है। विश्वकर्मावास्तुशास्त्र ग्रन्थ के रचियता विश्वकर्मा को माना गया है। यह वास्तुशास्त्र पर रचित स्वतंत्र ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ के प्रमाण इतिहास ग्रंथों में भी प्राप्त होते हैं और इसका लेखनकाल सोलहवीं शताब्दी में माना जाता है। इस ग्रन्थ में वास्तुविषयक सभी सूक्ष्मातिसूक्ष्म विधियों, नियमों तथा उनके मानकों को प्रस्तुत गया कियाहै। इस ग्रन्थ में 87 अध्याय हैं और अधिकांश श्लोक अनुष्टुप छन्द में हैं। इस ग्रन्थ में भगवान शङ्कर का स्तुतिपरक मंगलाचरण करते हुए ग्रन्थ का आरम्भ किया गया है। इसके आरम्भ में ही शिल्पशास्त्र के ज्ञान को अनिवार्य बताते हुए शिल्पशास्त्र के ज्ञान के बिना संसार में वास को ही दुष्करमाना गया है। यथोक्तम् -

शिल्पं विना नहि जगत्रिषु लोकेषु विद्यते।
जगद्विना न शिल्पञ्च वर्तते वासव प्रभो॥

शिल्पशास्त्र की महत्ता को बताते हुए वास्तुशास्त्र के विभिन्न विषयों को विश्वकर्मा ने ग्रन्थ में प्रस्तुत किया हैं। ऋग्वेद तथा यजुर्वेद में आचार्य विश्वकर्मा का नामोल्लेख प्राप्त होता है। मानसार नामक ग्रन्थ में विश्वकर्मा का वर्णन ब्रह्माण्ड के कर्ता के रूप में हुआ है। वाल्मीकि रामायण के सुन्दरकाण्ड में भी विश्वकर्मा का उल्लेख स्पष्टतया प्राप्त होता है। समराङ्गणसूत्रधार और अपराजितपृच्छा के अनुसार विश्वकर्मा को प्रभास वसु का पुत्र बताया है। वाल्मीकि रामायणमें वर्णित विमान का निर्माण भी भगवान विश्वकर्मा ने स्वयं ब्रह्मा जी के लिए किया था। महाभारत में वर्णित सभागार का निर्माण भी स्वयं विश्वकर्मा के द्वारा निर्मित था।

5. आचार्य मय

आचार्य मय के पिता का नाम कश्यप था और इनकी माता दिति थीं। कश्यप और दिति के पुत्र, नमुचि का भाई मय एक प्रसिद्ध दानव था। ये ज्योतिष और शिल्पशास्त्र के मर्मज्ञ थे ज्योतिष से अधिक वास्तुशिल्प के क्षेत्र में इन्हें ख्याति प्राप्त हुई। आदिकाल से ही इन्हें दानवों के विश्वकर्मा के रूप में जाना जाता है। पुराणों से लेकर आदिकाव्य रामायण तथा महाभारत में भी इनके द्वारा निर्मित भवन सभागार इत्यादि का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता हैं। इनकी दो पत्नियां थी हेमा और रम्भा, जिनसे उन्हें पाँच पुत्र और तीन कन्याएं प्राप्त हुई। रामायण के अनुसार मय को दशानन रावणका ससुर भी माना जाता है क्योंकि मन्दोदरी मयासुर की ही कन्या थीं।

महाभारत में मयसभा का वर्णन प्राप्त होता है जिसे स्वयं मयासुर ने क्षमाप्रार्थी होकर युधिष्ठिर के लिये बनाया था। वस्तुतः खाण्डववन में अग्नि संकट के समय भगवान श्रीकृष्ण ने चक्र से मयासुर का वध करना चाहा किन्तु अर्जुन ने उसे बचा लिया अतः बदले में मयासुर ने एक अद्भुत सभागार का निर्माण किया जिसे बाद में मयसभा के नाम से प्रसिद्धि मिली। शिवपुराण के अनुसार मयासुर बहुत ही भक्तिभाव वाला दानव था। उसका जन्म तो राक्षस कुल में हुआ, परन्तु वह धर्म के मर्म का ज्ञान रखता था और सदैव

असुरभाव से दूर रहता था। भगवान शङ्कर ने प्रसन्न होकर इनको विततलोक का राज्य प्रदान किया। इन्होंने वास्तुशास्त्र के प्रसिद्ध ग्रन्थ मयमतम् की रचना की। मयासुर द्वारा रचित मयमतम् नामक ग्रन्थ अद्भुत कृति है। इसके अतिरिक्त मय के अन्य ग्रन्थ भी हैं जिनमें से मयवास्तु तथा मयशिल्पशास्त्र तेलगु प्राप्त होता हैं।

6. आचार्य नारद

आचार्य नारद का नाम भगवान ब्रह्मा के छः मानस पुत्रों में सबसे छोटे पुत्र के रूप में प्राप्त होता है। इन्होंने कठिन तपस्या के मध्यम से ब्रह्मऋषि का पद प्राप्त किया था। यह भगवान विष्णु के अनन्य भक्त माने जाते हैं और निरन्तर नारायण नाम सुमिरण में लगे रहते हैं। यह धर्म के प्रचार तथा लोककल्याण की दृष्टि से सदा प्रयत्नशील रहते हैं। शास्त्रों में इन्हें भगवान का मन माना गया है। सम्भवतः इसी कारण से सर्वत्र समस्त लोकों में इनकी गति मानी जाती हैं। इनकी इसी महानता के इन्हें गीता के २६वें अध्याय में भगवान ने स्वयं को नारद के रूप में ही बताया है। अथर्ववेद से लेकर ब्राह्मण ग्रंथों, उपनिषदों, पुराणों तथा आदिकाव्य में भी इनका विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। इनके नाम की व्युत्पत्ति करते हुए कहा गया है कि नारं ददातीति नारद: नार अर्थात् परमात्मविषयकं ज्ञानं ददातीति "सदा ज्ञान को प्रदान करने वाला वास्तुशास्त्र के प्रमुख 18 आचार्यों में नारदमुनि का नाम छठे स्थान पर प्राप्त होता है। इनके दो मुख्य ग्रन्थ प्राप्त होते है –

1. नारद संहिता

2. नारदीय संहिता

जिनमें वास्तु के विषय में पर्याप्त सामग्री उपलब्ध होती हैं, जिसके आधार पर यह निश्चित माना जा सकता है कि महर्षि नारद भी वास्तुशास्त्र के मुख्य आचार्यों में से एक हैं, इनके यह दोनों ग्रन्थ वर्तमान में सुलभता से प्राप्त है।

7. आचार्य नग्नजित्

इतिहास एवं पुराणों में ये गन्धारनरेश कहे जाते हैं। ये महाभारत युद्ध के दो सहस्राब्दी पूर्व अथवा ईस्वी सन् के पाँच सहस्राब्दी पूर्व विद्यमान् थे। ये आयुर्वेद के उपदेष्टा चरक एवं भेल के गुरु पुनर्वसु आत्रेय के समय में ये हुए थे। आचार्य नग्नजित् के विषय में बहुत सी किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। चित्रलक्षणनामक ग्रन्थ में प्राप्त कथाअनुसारनग्नजित् को आदि चित्रकार व चित्रविद्या का प्रवर्तक माना गयाहै। प्राचीन काल में पृथ्वी पर एक भयजित नाम के राजा रहते थे। वह बहुत ही यशस्वी और धर्मात्मा थे । अपनी तपश्चर्या से वह बहुत शक्तिशाली हो गए। उनकी प्रजा निर्भय होकर रहती थी। एक बार से प्रजा में एक ब्राह्मण बालक की अकाल मृत्यु के कारण उन्होंने यम से युद्ध किया। जब यम को हार का अनुभव हुआ, तभी वहाँ ब्रह्मा जी पधारे और राजा को बालक का चित्र बनाने को कहा और उसमें प्राण डाल दिए। इस प्रकार वह बालक पुनः जीवित हो गया। तब ब्रह्मा जी ने राजा भवजित को वरदान दिया कि तुमने नग्न प्रेतों को भी जीत लिया, इसलिये तुम्हारा नाम आज से नग्नजित है, तुम्हारे द्वारा चित्रित यह प्रथम चित्र है। इस विद्या के द्वारा संसार का बड़ा कल्याण होगा और तुम संसार में सदा पूजनीय होगें।

शतपथ ब्राह्मण में भी एक गान्धार-राजा का उल्लेख प्राप्त होता है। महाभारत में भी कई

स्थानों पर नग्नजित् नाम का उल्लेख मिलता है तथा जैन सूत्रों में भी गांधार-राजा नम्नजित् का उल्लेख मिलता है। वर्तमान में एक चित्रलक्षण नामक ग्रन्थ भी प्राप्त होता है, जिसके मात्र तीन ही अध्याय प्राप्त होते हैं। सम्भव है कि इस ग्रन्थ में इससे अधिक भी अध्याय हो किन्तु अभी तक प्राप्त नहीं हुए हैं। चित्र है लक्षण में प्राप्त प्रमाण के अनुसार तो नग्नजित विश्वकर्मा के ही शिष्य हैं जिन्होंने ब्रह्मा जी के आदेश पर विश्वकर्मा से चित्रविद्या का ज्ञान प्राप्त किया।

चित्र-लक्षण की मूल प्रति में नग्नजिच्चित्रलक्षणनिर्देश इस प्रकार से ग्रन्थ का आरम्भ किया गया है अतः यह माना जा सकता है कि चित्रलक्षण नम्नजित् का ही है:, जिसका वर्णन वास्तुशास्त्र के अष्टादश आचार्यों में किया गया है क्योंकि चित्र और मूर्ति निर्माण को वास्तुशिल्प का ही अंग माना जाता है। इसीलिये इनके नाम को भी मुख्य आचार्य के रूप में ग्रहण किया गया है। चित्रलक्षण के तीन अध्याय ही वर्तमान में प्राप्त होते हैं। विद्वानों का मत है कि इसका कुछ ही अंश वर्तमान में प्राप्य है। इसके रचनाकाल के विषय में भी संदेह है किन्तु तथापि यह माना जाता है कि छठीं शताब्दी से पूर्व इसकी प्रसिद्धि हो चुकी थी क्योंकि वराहमिहिर की बृहद्संहिता में दो स्थानों में इसका उल्लेख मिलता है। चित्रलक्षण में तीन अध्याय हैं। इसके मंगलाचरण में कहा गया है कि इस ग्रन्थ में विश्वकर्मा -प्रह्लाद-नम्नजित् इन तीनों के द्वारा निर्दिष्ट सिद्धान्तों को इसमें संगृहीत किया गया है। तद्यथा –

विश्वकृन्नम्नजिद्देवप्रह्लादसारमुज्ज्वलम् ।
लक्षणमनुसृत्यैच विदुषां सुधियां पुनः॥

इस ग्रन्थ के अनुसार ब्राह्मण पुत्र का चित्र बनाने के बाद नग्नजित् ने ब्रह्मा जी से प्रश्न किए और उनकी जिज्ञासा को देखते हुए भगवान ब्रह्मा ने उन्हें विश्वकर्मा जी के पास भेजा तथा विश्वकर्मा जी के द्वारा नग्नजित् को चित्र विद्या का ज्ञान प्राप्त हुआ। अतः नम्नजित् विश्वर्मा के ही शिष्य हैं।

तद्यथा –

नग्नजिद् गच्छ तस्मात् त्वं विश्वकर्म समीपतः।
लक्षणविधिमानं च तुभ्यं स उपदेश्यति॥

चित्रविद्या की उत्पत्ति के विषय में भगवान विश्वकर्मा जी नम्नजित् को ज्ञान दिया गया है तथा किस प्रकार ब्रह्मा जी के द्वारा सृष्टि का आरम्भ हुआ। शनैः शनैः सभी देवी-देवताओं की उत्पत्ति हुई और उनके पूजन के लिये उनकी प्रतिमा भी प्रकट हुई। सभी देवता अपने चित्रों को देख कर और ब्रह्मा जी ने कहा कि इन्हीं मूर्तियों को यथा विधि प्रसन्न हुए पूजन-आहार आदि प्रदान कर सांसारिक जन कृतार्थ होंगे। तद्यथा -

लोकपूजाव्यवस्थायै प्रतिमानां यथायथम्।
नामादिकीर्तनं कार्य स्तवपूजादिकं तथा॥

प्रतिमां यां प्रतिदिनं पुण्यात्मा पूजयिष्यति।
तयैव दीयते शान्तिस्तस्मै भक्ताय सर्वतः ॥

इसमें चित्र निर्माण के समय ध्यान रखने योग्य सभी नियमों का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसमें शरीर के विभिन्न अंगों का चित्र की दृष्टि से विवेचन किया गया है तथा विशेष रूप से पाँच प्रकार की आँखों का वर्णन किया गया है।

8. आचार्य विशालाक्ष

यह नाम भगवान् शिव से सम्बंधित है, आचार्य विशालाक्ष के विषय में तथा उनके द्वारा रचित ग्रन्थों के विषय में अभी तक कोई विशेष जानकारी प्राप्त नहीं होती है। सम्भव है कि संस्कृत के अनेकों आचार्यों की तरह इन्होंने अपने द्वारा रचित ग्रन्थों में अपना नामोल्लेख नहीं किया हो। परन्तु 18 प्रवर्तक आचार्यों में इनकी गणना इनके वास्तुशास्त्रीय ज्ञान के प्रमाण की परिचायक है।

9. आचार्य पुरन्दर

ये सप्तम युगीन व्यास थे, इनके पिता प्रजापति कश्यप थे। यह सब देवों में कनिष्ठ थे। इनका जन्मकालीन नाम शक्र था। ये वैवस्वत यम के शिष्य थे, उनसे इन्होंने इतिहास-पुराण का अध्ययन किया था। इन्होंने नों से अलग-अलग विद्याएँ सीखी थीं। ये आयुर्वेद, ज्योतिष, व्याकरण, आदि अनेक विषयों के विद्वान् थे।आचार्य पुरन्दर के विषय में भी कोई प्रामाणिक ग्रन्थ अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है। पुरन्दर नाम का एक दुर्ग है, जो वर्तमान में महाराष्ट्र में स्थित है। जिस प्रकार से मय द्वारा रचित सभा का नाम मयसभा था, उसी प्रकार इस दुर्ग का सम्बन्ध भी आचार्य पुरन्दर से होने की सम्भावना की जाती है। यह दुर्ग महान मराठा राजा छत्रपति शिवाजी द्वारा कृत पुरन्दर की संधि केव्यक्तनाम से भी प्रसिद्ध है, यहीं शिवाजी महाराज के पुत्र संभाजी का जन्म हुआ था। यह किला यादव वंश के शासन में बनवाया गया था। यह माना जाता है कि पुरन्दर भगवान परशुराम की ही एक नाम है।

10. आचार्य ब्रह्मा

भारतीय धर्मशास्त्र के अनुसार ब्रह्मा के विषय में बहुत सी कथाएं प्रचलित हैं। आदिकाल से ही ब्रह्मा का स्थान सर्वोपरि माना गया है। वस्तुतः भारतीय परम्परा में तीन मुख्य देवता हैं। उनमें से ही एक ब्रह्मा भी हैं। ब्रह्मा को स्वयम्भू भी कहा जाता है जिसका अर्थ है स्वयं उत्पन्न होने वाला। पुराणों के अनुसार ब्रह्मा जी के चार मुख हैं जो चारों दिशाओं में हैं। इन्हें चारों वेदों के निर्माता भी कहा जाता है। वास्तुशास्त्र के प्रत्येक ग्रन्थ में ब्रह्मा की चर्चा प्राप्त होती है, जिन्हें वास्तुस्थापत्य के आदिगुरु के रूप में स्वीकार किया गया है। भृगु-अत्रि-वशिष्ठ-विश्वकर्मा-नारद-गर्ग इत्यादि सभी ऋषिगणो को ब्रह्मा के मानस पुत्र माना जाता है। वास्तुशास्त्र में ब्रह्मा को प्रमुख देवता मानते हुए वास्तुपदविन्यास में मध्य में भगवान ब्रह्मा को ही स्थान दिया गया है। इनका कोई भी स्वतन्त्र ग्रन्थ प्राप्त नहीं होता परञ्च 18 प्रवर्तकों में इनकी गणना होती है।

11. आचार्य कुमार

आचार्य कुमार द्राविड परम्परा के आचार्य हैं। इनका जन्म केरल के ब्राह्मण परिवार में हुआ। यह देवनारायण की राज्यसभा में रहते थे। देवनारायण स्वभाव से धार्मिक और विद्वानों का आदर करने वाला राजा था। इनके आश्रय में अन्य भी कई विद्वान रहते थे।

आचार्य कुमार द्वारा वास्तुशास्त्र का द्राविडशैली का एक अंतिम प्रतिनिधित्व ग्रन्थ शिल्परत्न है, जिसके संपादक महा. टी. गणपति शास्त्री जी ने श्री कुमार को 16वीं शताब्दी का माना है। शिल्परत्न आचार्य कुमार द्वारा रचित एकमात्र उपलब्ध ग्रन्थ है। शिल्पशास्त्र के अधेयताओं का मानना है कि मयमतम्-मानसार-शिल्परत्न यह तीनों ग्रन्थ एक ही परंपरा के पोषक हैं अर्थात् ये तीनों ही मय के सिद्धान्तों को प्रतिपादित करने वाले ग्रन्थ हैं। ग्रन्थ के आरम्भ में ही ग्रंथकार ने सभी आचार्यों को नमन किया है। तत्पश्चात आचार्य मय के प्रति अपना विशेष आभार व्यक्त किया है। तद्यथा

त्रिपुरनयरचना यत्करयोः कर्मचातुरी जाता।
शिल्पवरं तं दनुजैरर्चितचरणं मयं वन्दे ॥

शिल्परत्न का मुख्य स्रोत आगम को ही माना गया है। इस ग्रन्थ में एक और विभिन्न स्थली, मंदिरों, देवताओं की मूर्ति आदि का उत्कृष्ट वर्णन है, वहीं स्थापत्यकला में शिल्प को एक विशिष्ट स्थान देने का प्रयास भी किया है। तद्यथा -

ब्राह्मं क्षात्रं च तेजोऽप्यहमहमिकया वर्णिते यत्र वीरे ।
तस्य श्रीदेवनारायणधरणिपतेराज्ञयाज्ञाकरोऽहम्।

मन्दोऽप्यत्यन्तमोहादितिविपुलतरेभ्योथ पूर्वागमेभ्य: ।
संक्षिप्तं शिल्परत्नं प्रलिखितुमधुना प्रक्रमे तत्प्रमेण ॥

12. आचार्य नन्दीश

वास्तुशास्त्र के प्रवर्तकों में परिगणित आचार्य नन्दीश के विषय में मिलता है कि ये शिवजी के प्रमुख शिष्य एवं सेवक थे, इन्होंने अनेक प्रकार के तन्त्रों तथा विद्याओं का अध्ययन भगवान् शंकर (विशालाक्ष) से ही किया था। पर्वतीय स्थानों के भवन निर्माण की विद्या में इन्हें विशेष दक्षता प्राप्त थी। इनके द्वारा रचित ग्रन्थों के विषय में भी अभी तक कोई प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध नहीं होती है।

13. आचार्य शौनक

शौनक ऋषि को वैदिक ऋषि भी माना जाता है। वस्तुतः शौनक ऋषि वैदिक संस्कृत व्याकरण के प्रकाण्ड विद्वान तथा ऋक्प्रातिशाख्य के रचयिता ऋषि माने गए हैं। प्रातिशाख्य शिक्षा के सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं, जिनमें संस्कृत व्याकरण के विषय में पूर्ण वैदिक ज्ञान संगृहीत है। इन्हें ऋषि कात्यायन और आश्वलायन का गुरु माना जाता है। इन्होंने ऋग्वेद की बाष्कल और शाकल शाखाओं का एकीकरण किया। विष्णुपुराण के अनुसार शौनक को ऋषि गृत्समद् का पुत्र माना जाता है। शौनक ऋषि का सम्बन्ध ऋग्वेद से है तथा वास्तुशास्त्र का वर्णन ऋग्वेद के मन्त्रों में स्पष्ट रूप से प्राप्त होता है तो यह कहना निरर्थक नहीं है कि ऋषि शौनक वास्तुविद्या के भी आचार्य है। तद्यथा -

वास्तोष्पते प्रतरणो न एधि गवस्फ़ानो गोभिरश्वेभिरिन्दो ।
अजरासस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान् प्रति नो जुषस्व ॥
वास्तोष्पते शग्मथा संसदा ते साक्षीमदि गातपत्या एवया।
पाहि क्षेत्र उत योगे परं नो ययं घात स्वस्तिभिः सदा नः मदे।

चारों वेदों की अपनी-अपनी शाखाएं और संहितायें भी प्रचलित हैं यथा ऋग्वेद की शाकलसंहिता, यजुर्वेद की वाजसनेयीसंहिता, सामवेद की कौथुमीय संहिता, अथर्ववेद की शौनक संहिता । आचार्य शौनक के नाम पर ही शौनक संहिता का नामकरण किया गया है। इसमें 730 स्तोत्रों का संग्रह है, जिसमें 5987 मन्त्र हैं और इसको 20 काण्डों में विभक्त किया हुआ है।

14. आचार्य गर्ग

गर्ग नाम के अनेक आचार्य हुए हैं। आज से पाँच सहस्राब्दियों पूर्व विद्यमान थे। ये यदुवंश के पुरोहित थे। इनके शिष्यगण एशिया तथा यूरोप के अनेक भागों में थे। रूस का गार्ग्य प्रदेश ही आजकल जार्जिया कहलाता है। श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध में इनके सम्बन्ध में लिखा है -

"गर्गः पुरोहितो राजन् यदूनां तु महातपाः।
ज्योतिषामयनं साक्षाद् यत्तद् ज्ञानमतीन्द्रियम् ।

'आयुर्वेद, वास्तुशास्त्र आदि विभिन्न विद्याओं के कहना सही नहीं है क्योंकि इनके काल में भेद माना गया है। गर्ग आचार्य गर्ग एक ही व्यक्ति है- ऐसा ऋषि को ब्रह्मा जी का मानस पुत्र माना गया है। गर्ग संहिता की दो प्रतिलिपियां प्राप्त होती हैं, जिसमें से एक में भगवान कृष्ण की मधुरलीला तथा द्वितीय गर्गसंहिता ज्योतिष का ग्रन्थ है। ज्योतिष तथा वास्तु में अङ्गाङ्गिभाव माना जाता है। इसी कारण आचार्य गर्ग को वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्यों में स्थान प्राप्त है ।

15. आचार्य वासुदेव

वास्तुशास्त्र के प्रवर्तकों में परिगणित आचार्य वासुदेव श्रीकृष्ण वासुदेव थे, जिन्हें भगवान् श्रीकृष्ण के नाम से हम सब जानते हैं। ये वसुदेव के पुत्र होने से वासुदेव कहे जाते थे। इन्होंने सान्दीपनि गुरु के आश्रम में सम्पूर्ण विद्याओं का अध्ययन किया था। वास्तुशास्त्र के विशेष रहस्यों को इन्होंने विश्वकर्मा (त्वष्टा) के पुत्र मय से जान लिया था। इस बात का उल्लेख 'विश्वकर्मप्रकाश' में मिलता है। इन्होने इसी विद्या के आधार पर समुद्र में शत्रुओ से सुरक्षित द्वारकापुरी का निर्माण करवाया था। जो कि इनकी राजधानी थी ये आज से 5200 वर्ष पूर्व विद्यमान थे। इनके द्वारा रचित इस विद्या के ग्रन्थों के विषय में कोई भी प्रमाणिक चर्चा प्राप्त नहीं होती है।

16. आचार्य अनिरुद्ध

ये वासुदेव कृष्ण के पौत्र तथा प्रद्युम्न के पुत्र थे, इनका गान्धर्व विवाह वाणासुर की पुत्री उषा के साथ हुआ था, ये महाभारत के युद्ध के कुछ काल उपरान्त तक विद्यमान रहे थे । दुनिया का कोई भी योद्धा कितना ही बलशाली क्यों न हो इनको अपने हाथों से पकड़ नही सकता था, न ही उन्हें कैद किया जा सकता था, इसीलिए इनका नाम अनिरुद्ध पड़ा था। आचार्य अनिरूद्ध की गणना भी वास्तुशास्त्र के प्रवर्तकों में की गई है, परन्तु दुर्भाग्य से इनके द्वारा रचित ग्रन्थों के विषय में कुछ विशिष्ट जानकारी आज तक प्राप्त नहीं हो पायी है।

17. आचार्य शुक्र

इनका नाम उशना भार्गव तथा काव्य भी था, इनका जन्म हिरण्यकश्यपु के काल में हुआ था, वायुपुराण के अनुसार ये कई शताब्दियों तक जीवित रहे थे, भृगुवंशियो का इनको शासक भी नियुक्त किया गया था –

भृगूणामधिपञ्चैव काव्यं राज्येऽभ्यषेचयत् ।

इनके ही पुत्र त्वष्ट्रा या विश्वकर्मा, वरुत्री, शण्ड तथा मर्क थे, आचार्य शुक्र को दैत्यों का पुरोहित माना जाता है। क्योंकि ये हिरण्यकश्यप से लेकर वृत्रासुर तक दैत्य राजाओं के पुरोहित थे, आचार्य शुक्र को काव्य या उशना से भी सम्बोधित किया गया है, इनके महत्व को दर्शाते हुए भगवान् योगेश्वर कृष्ण ने स्वयं गीता में कहा है – **कवीनां उशना कविः** । सम्भवतः यह शुक्र वही शुक्राचार्य ही होंगे। शुक्राचार्य भृगु ऋषि तथा हिरण्यकश्यप की पुत्री दिव्या के पुत्र मानें जाते हैं। पुराणों में ये दैत्यों के पुरोहित माने गये हैं। इनके विषय में वर्णन प्राप्त होता है कि आरम्भ में इन्होंने अंगिरस ऋषि का शिष्यत्व ग्रहण किया। तत्पश्चात भगवान शङ्कर को अपना गुरु मानकर उनसे मृतसंजीविनी का वर प्राप्त किया। इनके द्वारा रचित प्रसिद्ध ग्रन्थ शुक्रनीति है।

शुक्राचार्य अनेक विद्याओं एवं ज्ञान विज्ञान में पारंगत थे । ऋग्वेद के कुछ मन्त्र इनके द्वारा दृष्ट हैं, उशना या आचार्य शुक्र आयुर्वेद के भी कर्ता थे। सुश्रुत संहिता एवं अष्टांग हृदय में इनके द्वारा प्रतिपादित विषनाशक औषधीय प्रयोग भी प्राप्त होते हैं।

18. आचार्य बृहस्पति

इनको अंगिरस भी कहते हैं, इन्होने वेदाध्ययन ब्रह्मकश्यप से तथा पुराणों का अध्ययन शुक्राचार्य से किया था, परन्तु शुक्राचार्य की तामसी प्रवृत्ति के कारण इनका मतभेद हो गया था, विवस्वान तथा इन्द्र इन्ही के शिष्य थे, राजा उपरिचरवसु भी इनका ही शिष्य एवं यजमान था, इनको चौथे वेद व्यास की संज्ञा भी प्राप्त है। आचार्य बृहस्पति का उल्लेख विभिन्न जगह प्राप्त होता है। वेदोत्तर साहित्य में बृहस्पति को देवताओं का पुरोहित माना गया है। इनका जन्म अंगिरा ऋषि की सुरुपा नाम की पत्नी से हुआ। इनकी दो पत्नियाँ थीं तारा और शुभा। देवगुरु बृहस्पति स्वर्ण का मुकुट तथा कण्ठ में सुन्दर माला धारण किए हुए हैं।

पीतवस्त्र धारण कर कमल आसन पर विराजमान हैं। यह स्वर्णनिर्मित भवन में रहते हैं और इनका रथ भी सोने का है, जिसमें पीतवर्ण के आठ घोड़े जुते हैं। महर्षि बृहस्पति द्वारा रचित बार्हस्पत्यसूत्रम् ग्रन्थ सूत्रों के माध्यम से महर्षि बृहस्पति द्वारा नीतिशास्त्र-कलाशाख-राज-धर्म-नित्योपासनविधि-आवास मुहूर्त इत्यादि के विषय में सूत्र शैली में ज्ञान प्रदान किया गया है। इस ग्रन्थ के तृतीय और चतुर्थ अध्याय में वास्तुशास्त्र से संबन्धित सूत्रों का वर्णन प्राप्त होता।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि इन अठारह प्रवर्तक आचार्यों ने वास्तुशास्त्र के संवर्धन और संरक्षण में प्रत्यक्ष योगदान देकर शास्त्र को लोगों तक पहुंचाया।

अभ्यास प्रश्न – 1

निम्नलिखित में से सही विकल्प का चुनाव कीजिये

1. अग्निपुराण के अनुसार वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्यो की संख्या है –

   अ. 18

   ब. 32

   स. 19

   द. 23

2. ब्रह्मा के मानस पुत्र कौन थे ?

   अ. आचार्य नारद

   ब. आचार्य वृहस्पति

   स. आचार्य पुरन्दर

   द. कोई नहीं

3. वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्यो में किसका नाम नही है –

   अ. आचार्य नारद

   ब. आचार्य वृहस्पति

   स. वराहमिहिर

   द. आचार्य पुरन्दर

4. शौनक कृत "शौनक संहिता" में कितने काण्ड हैं –

   अ. 20

   ब. 23

   स. 34

   द. 24

अभ्यास प्रश्न – 2

निम्नलिखित में से सत्य असत्य का निर्धारण कीजिये

1. वास्तुशास्त्र के बारह अंग हैं। ()
2. वास्तुशास्त्र का मूल उद्गम ब्रह्माजी से हुआ है। ()
3. ज्योतिष एवं वास्तुशास्त्र का आपस में सम्बन्ध नही है ()
4. ब्रह्मा जी ने अपने मुख से विश्वकर्मा आदि की उत्पत्ति की ()

अभ्यास प्रश्न – 3

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिये –

1. आचार्य कुमार .... परम्परा के आचार्य हैं।

2. ऋग्वेद में वास्तु शब्द का प्रयोग .... के लिए हुआ है।
3. ब्रह्मा जी ब्रह्मा के विश्वभू नामक मुख से .... की उत्पत्ति हुयी।
4. आचार्य वराहमिहिर के अनुसार वास्तुशास्त्रज्ञों की संख्या .... है।

1.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि वास्तुशास्त्र का उद्भव किन प्रवर्तक आचार्यों से हुआ तथा इस शास्त्र की आचार्य परम्परा कौन सी है? इस शास्त्र के प्रवर्तक आचार्यों का वर्णन भी आपने पढ़ा। उनका विस्तृत परिचय जानकर उनके कृतित्व से भी आप परिचित हुए। कुछ आचार्य वेदांग ज्योतिष के संहिता स्कन्ध से वास्तु का प्रत्यक्ष सम्बन्ध मानते है, कुछ विद्वान अष्टाङ्गवास्तु में वास्तु के आठ अङ्गों में ज्योतिष को भी एक अङ्ग मानते हैं। इस प्रकार दोनों ही स्थितियों में ज्योतिष और वास्तुशास्त्र का अङ्गांगीभाव सिद्ध होता है। इसलिए वास्तु' के प्रवर्तक आचार्य और ज्योतिष के प्रवर्तक आचार्यों में कहीं-कहीं साम्यता भी दृष्टिगोचर होती है।

1.5 शब्दावली

प्रवर्तक - प्रचलित करने वाला।

अष्टाङ्गवास्तु - वास्तुशास्त्र के आठ अंग।

संहिता - ज्योतिष शास्त्र के तीन स्कन्धो में एक स्कन्ध जिसके अंतर्गत सामूहिक फल का विचार किया जाता है।

सूत्र शैली - कम शब्दों में बात कहना अथवा संक्षेपीकरण।

स्वस्तिवाचन - कल्याणकारी वचन।

द्राविड - स्कन्द पुराण के अनुसार विन्ध्याचल से दक्षिण दिशा का क्षेत्र या प्रदेश, वर्तमान में इसका अर्थ दक्षिण भारत से भी ग्रहण किया जाने लगा है।

1.6 अभ्यास प्रश्न की उत्तरमाला

अभ्यास प्रश्न – 1

1. ब. 32
2. अ. आचार्य नारद
3. स.वराहमिहिर
4. अ. 20

अभ्यास प्रश्न – 2

1. असत्य
2. सत्य
3. असत्य

4. सत्य

अभ्यास प्रश्न – 3

1. द्राविड
2. भवन
3. विश्वकर्मा
4. सात

1.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. बार्हस्पत्यसूत्रम्
2. नारद संहिता
3. मत्स्यपुराण
4. अग्निपुराण
5. विश्वकर्माप्रकाश

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY